# 03 खुशी-खुशी सीखना

रति बासु

मानो जिन्दा होने की खुशी मनाता, बछड़ा जोर मारती जीवन शक्ति के चलते काँपती टांगों से चुस्त, भरपूर छलाँगें लगाता है। एक तेज बौछार के बाद अचानक सूरज निकलता है तो खुशबू बिखेरती गीली–भीगी धरती में इक निखार आ जाता है। मछली पकड़ने वाले पक्षी कौड़िल्ला (किंगफिशर) के नीले पंख की एक झलक; नरम रोएँदार पूँछ ऊपर उठाए, घबराई हुई–सी सरपट दौड़ती गिलहरी की 'टट् टट्'; उड़ते हुए से नीचे को आते, मानो आशीष देते साल के फूल; रात की ठण्डी धीमी हवा में दूर से चमेली के फूलों की आती महक; सुबह–सुबह हरी घास पर ओस की बूँदें; बारिश में बच्चों की खिलखिलाती हँसी। यानी प्रकृति और इन्सान, जीवन–चक्र में भाग लेते हुए खुशी में, खुशी को महसूस करते हैं।

'पाठ भवन' का परिसर चमकते चेहरे लिए एक–दूसरे से बात करते, चहकते बच्चों की आवाजों से भरा–भरा–सा महसूस होता है। सूरज की किरणों से बनते, पल–पल बदलते–लहराते बिम्बों के बीच ये बच्चे पेड़ों की छाया में लग रही एक कक्षा से दूसरी की ओर जाते दिखाई देते हैं। खुले आसमान की खूबसूरती और आँखों के सामने अपने शानदार रंगों में बदलते विभिन्न मौसम–प्रकृति सब शिक्षकों की गुरु है।

बच्चे आते हैं–सतर्क, बेचैन और उत्सुक। वे पूछते नहीं हैं कि क्या बनाएँ–बल्कि स्वयं ही कागज पर लकीरें और आकृतियाँ बनाने लगते हैं। प्रारम्भिक उम्र में बच्चा मुख्य तौर से मन पर अंकित प्रभावों से ही निर्देशित होता है, वह चीजों की पहचान बनाता है, उत्सुक तथा जिज्ञासु होता है। उसमें हैरत और अचरज का भाव जागता है। एक की तुलना में दूसरी का रूप–आकार बच्चे के दिमाग पर अंकित अनुमान और प्रभाव के दम पर ही तय होता है। एक फूल, एक पेड़ या मकान से बड़ा हो सकता है। कान, नाक और बाल उसे तुरन्त महत्त्वपूर्ण प्रतीत नहीं होते और इसलिए कई चित्रों से गायब होते हैं। जिस वास्तविकता और यथार्थ को वह जानता–पहचानता है, वह देखे गए यथार्थ से अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकता है। जैसे, एक ठेले या कार के पहिए तो चार बनाए जाएँ मगर दिखाई देते हों दो या तीन ही। इस चरण पर बच्चे को दुरुस्त करने का अर्थ होगा उसके दिमाग पर अंकित प्रभाव की अभिव्यक्ति के सत्य को नष्ट करना। दोनों ही दृष्टिकोण बराबर तौर पर जायज हैं और दोनों का आदर किया जाना चाहिए।

कभी–कभी हो सकता है कि बच्चा एक ही चित्र को बार–बार बनाए। यह अत्यधिक प्रशंसा की वजह से हो सकता है या इसलिए भी कि वह उसे बार–बार बनाने में सहज महसूस करता है। (कई प्रतिष्ठित कलाकार भी ऐसा करते हैं!) ऐसा होने पर बहुत ही प्यार से, सुझाव देते हुए बच्चे को निर्देशित किया जा सकता है।

बच्चे को धीरे–धीरे इस बात के लिए प्रेरित किया जा सकता है कि वह बेतरतीब, बस यूँ ही चीजों को साथ रखने से बचे। वह उनके आपसी रिश्तों को समझने लगे, उनका स्थान तय कर पाए और उनके तुलनात्मक आकार को देख–परख पाए। एक बच्चे द्वारा बनाए गए चित्र में एक मकान, एक मछली, पेड़, पक्षी या कोई भी आकृति हो सकती है। बच्चे को यह सोचने के लिए प्रेरित किया जा सकता है कि ये कहाँ पाए जाते हैं–यानी मछली पानी में, पक्षी पेड़ या आकाश में आदि। "यह आकृति मकान के दरवाजे में से कैसे घुसेगी?" यह सवाल आकृति के मुकाबले में मकान और दरवाजे के साइज की समस्या का फट से हल निकाल देता है। इस प्रकार अनुपात से सम्बन्धित सीख बहुत ही सरल, स्वाभाविक और तार्किक

हो जाती है।

प्रत्येक बच्चा अद्वितीय होता है। एक बच्चे का अवलोकन और प्रतिक्रिया दूसरे बच्चे के अवलोकन और प्रतिक्रिया जैसे ही नहीं होंगे। पेन्सिल का पकड़ना और रंगों का इस्तेमाल भी एक–सा नहीं होगा। तुलना करना और किसी बात पर फैसला दे देना बच्चे के काम की स्वाभाविक गति और लय के लिए लाभप्रद नहीं होगा। ऐसे में उसमें हीनता का भाव आ सकता है, वह दूसरों की नकल करने को लालायित हो सकता है और स्वयं के बारे में अनिश्चितता से घिर सकता है। यह डर कि उसका काम उतना अच्छा नहीं है जितना होना चाहिए, उसकी स्वाभाविक, स्वत:स्फूर्त अभिव्यक्ति को नष्ट कर सकता है, जिसके चलते उसके लिए कला की गतिविधियों से खुशी लुप्त हो सकती है। कला का सामर्थ्यवान शिक्षक वह है जो बच्चे के मन में सहानुभूति के साथ, समझदारी से प्रवेश कर सके – जो बच्चे की आँखों से देख पाए और देखने में उसकी मदद कर सके।

जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है, उसे अपने विचार और अवलोकित चीजों को अधिक सटीक ढंग से अभिव्यक्त करने की आवश्यकता महसूस होती है। वह वस्तुओं को वैसा ही प्रस्तुत करना चाहता है जैसा वह उन्हें देखता है। उसे अब कुछ तकनीकी ज्ञान की दरकार होगी, जो उसकी व्यक्तिगत जरूरतों और प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए सुनियोजित तरीके से दिया जाना चाहिए, ताकि उसकी अन्तर्निहित सृजनात्मक प्रेरणा तथा आवेग समाप्त न हो। कला–शिक्षक बच्चे में आनन्द की भावना और अनुभूति को जिन्दा रखना चाहता है तो व्यक्तिगत जरूरतों का इस रूप में ध्यान रखा जाना निहायत जरूरी है।

विभिन्नता में भी आनन्द आता है और इसीलिए बच्चों को हर तरह की सामग्री का इस्तेमाल करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए–चॉक, पेन्सिल, चारकोल, स्याही, पानी के रंग और कोलाज। प्रत्येक माध्यम की अपनी विशेषताएँ और अन्तर हैं। पेन्सिल से खींची गई लकीर पतली, सटीक और तीखापन लिए होगी; ऑयल पेस्टल गाढ़ा और बहता हुआ होगा; पानी के रंग अधिक तरल होंगे–वे खाके की अभिव्यक्ति की बजाए रीति और रूप को अभिव्यक्त करते हैं। पेन्सिल से खींचे चित्र में रंग भरना बच्चे को सीमित करने वाला अभ्यास है। माध्यमों को मिश्रित कर लिया जाए तो प्रत्येक माध्यम की बेहतर समझ विकसित करने में, उसकी सम्भावनाओं और सीमाओं को समझने में भी मदद मिलती है। कोलाज का प्रयोग रूप–आकार की गहरी समझ विकसित करता है। अभिव्यक्ति के नए तरीके काम को अधिक रुचिकर और आकर्षित करने वाला बना देते हैं।

कागज के रूप–आकार और दिशा (आड़े या खड़े), में

**सामूहिक कार्य, कक्षा IV-X, जलरंग तथा जैल पेन से कागज पर, पाठ भवन, शान्ति निकेतन**

**पोलमी घोष, कक्षा V, जलरंग, पाठ भवन, शान्ति निकेतन**

परिवर्तन हो तो देखने का तरीका पूरी तरह बदल सकता है। स्केल के प्रयोग को महत्त्व और बढ़ावा न दिया जाए क्योंकि उद्देश्य देखी गई चीज को सटीक, हू–ब–हू वैसा ही बनाना नहीं है बल्कि मोटे तौर पर उसके भाव को अभिव्यक्त करने का है। यंत्र–साधनों पर निर्भरता न हो तो हाथ अधिक सधा हुआ रहता है और अवलोकन के प्रखर अभ्यास का भी विकास होता है। बाद में, जब बच्चा बड़ी कक्षाओं में पहुँच जाए, तब शुरुआती सालों की आजादी और स्वत:स्फूर्त अभ्यास में कमी लाए बिना कोई भी यंत्र–औजार प्रयोग किया जा सकता है।

जब बच्चे अपनी पसन्द का माध्यम चुनने में सक्रिय तौर पर शामिल होते हैं, तो वे तनाव–मुक्त महसूस करते हैं और कुछ ऐसा खोज पाते हैं जिसे करने में वे अच्छे हैं और इसलिए नतीजे से खुश भी होते हैं। यह बात विषयवस्तु पर भी लागू होती है।

मेरे विचार से कक्षा की गतिविधियों में साथ मिलकर काम करने का बहुत महत्त्व है। विचार साझा किए जाते हैं, योजना बनाई जाती हैं, सहमतियाँ–असहमतियाँ होती हैं और समूचा समूह काम के लिए जिम्मेवार होता है। समूह बराबर के लोगों का भी हो सकता है और छोटे–बड़ों का भी। सब एक–दूसरे से सीखना शुरू करते हैं–विचार साझा करना, एक–दूसरे के नजरिए को आदर–मान देना, सामूहिक स्तर पर विश्वास बनाना। काम छोटे–छोटे भी हो सकते हैं, जैसे कला की कॉपी के दो पृष्ठ, या फिर बड़े भी–जैसे, दस बड़ी शीट्स को इकट्ठा करके एक काम के तौर पर प्रयोग में लाना। बच्चा छोटे से बड़े की ओर बढ़ता है, ऐसा करते हुए उसका आत्मविश्वास बढ़ता है, वह परस्पर सहयोग से काम करना और विचारों में मतभिन्नता के हल तलाशना सीखता है। इस गतिविधि से कक्षा में खुशी और जोश, ऊर्जा और उत्सुकता पैदा होते हैं।

कक्षा में गतिविधियों में आनन्द और उत्सुकता होना महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है। आनन्द तब ही होगा जब बच्चा भय–रहित होगा, उसमें आत्मविश्वास होगा। बहुत अधिक आलोचना और निर्देशन होगा तो बच्चा भय में रहेगा–सही बात न कर पाने का भय, असफल होने का भय। महत्त्वपूर्ण है कि रवैया सकारात्मक हो और प्रत्येक बच्चे के काम को सराहा जाए। अगर प्रत्येक बच्चे के काम को प्रदर्शित किया जाता है तो यह बहुत आसानी से हो सकता है। चित्र बनाने के लिए जो माध्यम वह कक्षा में लाया है, बच्चे को अपना काम उसी का प्रयोग करते हुए

**अमृता चट्टोपाध्याय, कक्षा X, तैलचित्र, पाठ भवन, शान्ति निकेतन**

पूरा करने को प्रोत्साहित किया जा सकता है। शिक्षक उसे अपने काम के बारे में बात रखने को भी उत्साहित कर सकते हैं। इन तरीकों से बच्चे के मन से 'डर' की भावना निकाली जा सकेगी, वह सहज होना सीखेगा और काम में उसे आनन्द आने लगेगा। उसे एहसास होगा कि कला का काम मुश्किल नहीं है और कोशिश की जाए तो बहुत कुछ किया जा सकता है।

मेरा पक्का विश्वास है कि स्कूल में कला की गतिविधियों को अंकों के आधार पर लाभ–हानि के साथ जोड़कर तनाव पैदा नहीं किया जाना चाहिए। किसी प्रकार की प्रतियोगिता या प्रतिस्पर्धा नहीं होनी चाहिए। किसी एक के काम को सबसे बेहतरीन करार देने की प्रक्रिया तो वस्तुपरक न होकर व्यक्तिपरक ही होगी। इससे कुछ अच्छा नहीं होने वाला–बल्कि नुकसान ही होता है।

जब अंकों या प्रतिस्पर्धा का दबाव या तनाव न हो तो स्वतंत्रता के एक गहरे भाव का एहसास और अनुभव होता है। प्रत्येक व्यक्ति की योग्यता के प्रति गरिमा और प्रतिष्ठा का भाव तथा प्रत्येक की योग्यता में अन्तर और भिन्नताओं की समझ हो तो यह एहसास विकसित होने में मदद मिलती है कि प्रत्येक के पास योगदान करने को कुछ न कुछ है। इससे विश्वास पैदा होता है और साझा तौर पर सीखने, सहयोग, आदान–प्रदान का रवैया भी, और स्वतंत्र तौर पर आत्म–अभिव्यक्ति तथा आनन्द भी मिलता है।

सीखना जीवन के स्वाभाविक विकास की प्रक्रिया का हिस्सा है–यह हमेशा शान्ति निकेतन का एक उद्देश्य रहा है, इसीलिए शिक्षा सम्पूर्ण जीवन के लिए है, केवल ज्ञान और आजीविका के लिए नहीं। हमारे परिवेश को कैसा रखा जाता है, कपड़े पहनने का तौर–तरीका क्या है, हम स्वयं को कैसे व्यवहार में रखते हैं–ये सब सुन्दरता और सौन्दर्यशास्त्र की एक अनुभूति विकसित करने में मदद करते हैं और हम जो कुछ भी अस्तित्व में है, उस सबके साथ सामंजस्य का जीवन जी सकते हैं।

---

यह लेख लिखने में मैंने रबीन्द्रनाथ टैगोर के 'माय स्कूल', 'अ पोएट्स् स्कूल' एवं 'माय एजुकेशनल मिशन' लेखों की मदद ली है। साथ ही क्षितिज रॉय द्वारा सम्पादित 'द विश्व भारती क्वार्टर्ली, एजुकेशन नम्बर',. शान्तिनिकेतन 1947 के निम्नलिखित लेखों से :


1. बिनोद बेहारी मुखर्जी, 'टीचिंग ऑफ आर्ट टु चिल्ड्रन'।
2. नन्दलाल बोस, 'अ प्राइमर फॉर आर्ट एजुकेशन'।
3. ज्ञानेन्द्र चट्टोपाध्याय, 'रबीन्द्रनाथ एण्ड हिज आश्रम स्कूल'।



***रति बासु*** *एक पेशेवर कलाकार हैं। वे 1982 से कला शिक्षिका हैं और 1988 से विश्व भारती के 'पाठ भवन' स्कूल में हैं। उन्होंने महाराजा सयाजी राव विश्वविद्यालय, बड़ौदा से चित्रकला और ग्राफिक आर्ट्स में स्नातक तथा स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण की है। वे राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 के कला, संगीत, नृत्य और थियेटर के राष्ट्रीय फोकस ग्रुप की सदस्य थीं। 'पाठ भवन' के बहुत से आदर्श इस समूह की कला–शिक्षा के लिए की गई सिफारिशों में शामिल हैं। उनसे ratibasu@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवादः*** *रमणीक मोहन*